भारतीय समाज के विविध आयाम

डॉ0 नम्रता जैन

तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय, मुरादाबाद

नि:शक्त कल्याणकारी योजनाओं का विवेचन 78
डॉ. हंसा शुक्ला,प्राचार्य, डॉ. रवीश कुमार सोनी, गोपाल राम
12. 'गुलाम मंडी' उपन्यास में किन्नर समाज का यथार्थ 83
पारुल
13. आदिवासी विमर्श 89
डॉक्टर संगीता ठाकुर
14. आदिवासी विमर्श 96
डॉ राजेन्द्र कुमार
15. ग्लोबल गाँव के देवता में विस्थापित आदिवासी जीवन 102
मेघना एम. के
16. 'पदचाप' में दलित –विमर्श 107
अश्वति पि पि
17. आदिवासी समाज :प्रतिरोध की भावना 111
डॉ. लूनेश कुमार वर्मा
18. नागार्जुन की कविताओं में आधी आबादी 117
डॉ. राहुल कुमार
19. ''बौद्ध धम्म और अम्बेडकर'' 123
रवीन्द्र कुमार
20. 'आपका बंटी':बालमन की व्यथा-कथा 130
सुमन शर्मा
21. भारतीय समाज और बाल विमर्श 137
डॉ संतोष कुमार यादव
22. भारतीय समाज के परिपेक्ष में बालकों के विकास योग की भूमिका 141
डॉक्टर रामा यादव, प्रियंका कुमारी
23. ई कचरे से अभिशप्त होता बचपन औऱ नाकाम कानून 145
डॉ अजय खेमरिया
24. "भारतीय कला और समाज का दर्शन" 149
शिवम् गुप्ता
25. केरल में कोविड़ - 19 नव विमर्श : विभिन्न क्षेत्रों में 155
डॉ. चित्रा. वी. एस

13
आदिवासी विमर्श

डॉक्टर संगीता ठाकुर
अध्यक्ष, हिंदी विभाग
सोनोपंत दांडेकर, महाविद्यालय पालघर, मुंबई महाराष्ट्र।

प्रस्तावना -

आदिवासी शब्द दो शब्दों 'आदि' और 'वासी' से मिल कर बना है और इसका अर्थ मूल निवासी होता है। भारत की जनसंख्या का 8.6% (10 करोड़) जितना एक बड़ा हिस्सा आदिवासियों का है। पुरातन लेखों में आदिवासियों को अत्विका कहा गया है (संस्कृत ग्रंथों में)। महात्मा गांधी ने आदिवासियों को गिरिजन (पहाड़ पर रहने वाले लोग) कह कर पुकारा है। भारतीय संविधान में आदिवासियों के लिए 'अनुसूचित जनजाति' पद का उपयोग किया गया है। भारत के प्रमुख आदिवासी समुदायों में आंध, गोंड, मुण्डा, खड़िया, बोडो, कोल, भील, कोली, सहरिया, संथाल, मीणा, उरांव, लोहरा, बिरहोर, पारधी, असुर, टाकणकार आदि हैं।भारत में आदिवासियों को प्रायः 'जनजातीय लोग' के रूप में जाना जाता है। आदिवासी मुख्य रूप से भारतीय राज्यों उड़ीसा, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, राजस्थान आदि में बहुसंख्यक व गुजरात, महाराष्ट्र, आंध्र प्रदेश, बिहार, झारखंड, पश्चिम बंगाल में अल्पसंख्यक है जबकि भारतीय पूर्वोत्तर राज्यों में यह बहुसंख्यक हैं, जैसे मिजोरम। भारत सरकार ने इन्हें भारत के संविधान की पांचवी अनुसूची में " अनुसूचित जनजातियों " के रूप में मान्यता दी है।

अध्ययन के उदेश्य

1. आदिवासी - अस्मिता को वृहत्तर समाज से काटकर देखने की बजाय शोषित - उत्पीड़ित वर्ग और शोषक वर्ग के बीच चले आ रहे पारंपरिक संघर्ष के रूप में देखा है।
2. आदिवासियों के संघर्ष को एक व्यापक संघर्ष के हिस्से के रुप में देखा गया है।

परिभाषा -

आदिवासी साहित्य से अभिप्राय उस साहित्य से है जिसमें आदिवासियों का जीवन व समाज उनके दर्शन के अनुरूप व्यक्त हुआ है। कुछ आदिवासी साहित्यकारों व लेखकों ने आदिवासी साहित्य को निम्न प्रकार परिभाषित किया है-

प्रसिद्ध मराठी आदिवासी साहित्यकार डॉ. विनायक तुमराम कहते हैं - ''आदिवासी साहित्य वन संस्कृति से संबंधित साहित्य है। आदिवासी साहित्य वन जंगलों में रहने वाले उन वंचितों का साहित्य है, जिनके प्रश्नों का अतीत में कभी उत्तर ही नहीं दिया गया। यह ऐसे दुर्लक्षितों का साहित्य है, जिनके आक्रोश पर मुख्यधारा की समाज-व्यवस्था ने कान ही नहीं धरे। यह गिरि-कन्दराओं में रहने वाले अन्याय ग्रस्तों का क्रांति साहित्य है। सदियों से जारी क्रुर और कठोर न्याय-व्यवस्था ने जिनकी सैंकड़ो पीढ़ियों को आजीवन वनवास दिया, उस आदिम समूह का मुक्ति-साहित्य है आदिवासी साहित्य। वनवासियों का क्षत जीवन, जिस संस्कृति की गोद में छुपा रहा, उसी संस्कृति के प्राचीन इतिहास की खोज है यह साहित्य। आदिवासी साहित्य इस भूमि से प्रसूत आदिम-वेदना तथा अनुभव का शब्दरूप है।''

प्रसिद्ध आदिवासी एक्टीविस्ट व कवयित्री रमणिका गुप्ता कहती हैं - ''मैं आदिवासी साहित्य उसी को मानती हूँ जो आदिवासियों ने लिखा और भोगा है। उसे आदिवासी समस्याओं, सांस्कृतिक, राजनीतिक व आर्थिक स्थितियों तथा उनकी जीवन-शैली पर आधारित होना होगा। अर्थात् आदिवासियों द्वारा आदिवासियों के लिए आदिवासियों पर लिखा गया साहित्य आदिवासी साहित्य कहलाता है।'' वैसे जो आदिवासी समर्थक साहित्य के रचनाकार होते है , वे भी आदिवासियों की समस्याओं के हल हेतु कंधे से कंधा मिलाकर खड़े होते हैं।

आदिवासी कथाकार रूपलाल बेदिया के अनुसार - ''अगर आदिवासी विषय, दर्शन, संस्कृति के अनुकूल साहित्य गैर-आदिवासी लेखक भी लिखते हैं तो उसे आदिवासी साहित्य मानना चाहिए। हमारी वाचिक परम्परा में जो समिद्ध साहित्य है उससे बहारी समाज के लेखक परिचित नहीं है। उन्हें लिखित रूप में सामने लाने की जरूरत है।''

प्रो. व्यंकटेश आजाम लिखते हैं - ''जो आदिवासी जीवन से प्रेरणा लेकर लिखा हुआ है, वह आदिवासी साहित्य है।''

आदिवासी लेखिका वंदना टेटे की स्थापना है कि ''गैर-आदिवासियों द्वारा आदिवासियों पर रिसर्च करके लिखी जा रही रचनाएँ शोध साहित्य है, आदिवासी साहित्य नहीं। आदिवासियत को नहीं समझने वाले हिंदी-अंग्रेजी के लेखक आदिवासी साहित्य लिख भी नहीं सकते। सुनी-सुनाई बातों से आदिवासी जीवन का सच प्रस्तुत नहीं किया जा सकता।''

आदिवासी साहित्य की अवधारणा को लेकर आदिवासी एवं गैर-आदिवासी दृष्टि में तीन तरह के मत हैं -

1. आदिवासी विषय पर लिखा गया साहित्य आदिवासी साहित्य है। यह अवधारणा गैर-आदिवासी लेखकों की है। संजीव, राकेश कुमार सिंह, महुआ माजी, रमणिका गुप्ता, बजरंग तिवारी आदि इसके समर्थक रहे हैं।

2. आदिवासियों द्वारा लिखा गया साहित्य आदिवासी साहित्य है। इस अवधारणा से संबंधित साहित्यकार/लेखक जन्मना एवं स्वानुभूति के आधार पर आदिवासियों द्वारा लिखे गए साहित्य को ही आदिवासी साहित्य मानते हैं।

3. 'आदिवासियत' अर्थात् आदिवासी दर्शन के तत्त्वों वाला साहित्य ही आदिवासी साहित्य है। इस अवधारणा को आदिवासी साहित्य की परिभाषा के सर्वाधिक नजदीक माना जा सकता है।

उपर्युक्त परिभाषाओं एवं मतों के आधार पर निष्कर्ष रूप में कहा जा सकता है कि जिसमें आदिवासी दर्शन होगा, वही सच्चे मायनों में आदिवासी साहित्य होगा। आदिवासी साहित्य जीवनवादी साहित्य है। आदिम समूहों में वर्गरहित, भेदभाव रहित, जाति रहित समाज-व्यवस्था करना ही आदिवासी साहित्य का उद्धेश्य है। आदिवासी साहित्य की बुनियादी शर्त उसमें आदिवासी दर्शन के तत्त्वों का होना है।

हिंदी में आदिवासी साहित्य की अवधारणा

हिन्दी में आदिवासी साहित्य की अवधारणा का विकास हो रहा है। जिसके अंतर्गत परंपरा और आधुनिकता का, विकास और विनाश का, मुख्यधारा की संस्कृति और आदिवासी मूल्यबोध, अस्तित्व, अस्मिता का जो द्वंद्व है, उन सबके बीच 'आदिवासी संस्कृति, राजनीति, साहित्य' की एक नई अवधारणा का निर्माण हो रहा है। जीवन की जटिलता और प्रकृति से लगाव ही उसके साहित्य का मूलाधार है। क्योंकि कोई भी अभिव्यक्ति 'स्व' के बिना निर्मित नहीं हो सकती है। आदिवासी साहित्य जीवन का साहित्य है। वह प्रकृति का सहयोगी, सह अस्तित्व का समर्थक, ऊँच-नीच, भेदभाव एवं छल-कपट से दूर है। वह संपत्ति संकलन या जमाखोरी की भावना से मुक्त है। आदिवासी सामाजिक न्याय का पक्षधर होने के साथ-साथ अन्याय का विरोधी है। उसके साहित्य में इन्हीं सब बातों का समावेश होता है। आदिवासी आदिवासी समाज और जीवन-दर्शन को समझने की दिशा में सबसे महत्वपूर्ण दस्तावेज़ 'राँची घोषणा-पत्र'13 है। जिसके अनुसार आदिवासी साहित्य का स्वरूप आदिवासी दर्शन के अनुरूप होना चाहिए। इसके मूल तत्व हैं -

"1. प्रकृति की लय-ताल और संगीत का जो अनुसरण करता हो।

2. जो प्रकृति और प्रेम के आत्मीय संबंध और गरिमा का सम्मान करता हो।

3. जिसमें पुरखा-पूर्वजों के ज्ञान-विज्ञान, कला-कौशल और इंसानी बेहतरी के अनुभवों के प्रति आभार हो।
4. जो समूचे जीव जगत की अवहेलना नहीं करें।
5. जो धनलोलुप और बाजारवादी हिंसा और लालसा का नकार करता हो।
6. जिसमें जीवन के प्रति आनंदमयी अदम्य जिजीविषा हो।
7. जिसमें सृष्टि और समष्टि के प्रति कृतज्ञता का भाव हो।
8. जो धरती को संसाधन की बजाय माँ मानकर उसके बचाव और रचाव के लिए खुद को उसका संरक्षक मानता हो।
9. जिसमें रंग, नस्ल, लिंग, धर्म आदि का विशेष आग्रह न हो।
10. जो हर तरह की गैर-बराबरी के खिलाफ हो।
11. जो भाषाई और सांस्कृतिक विविधता और आत्मनिर्णय के अधिकार के पक्ष में हो।
12. जो सामंती, ब्राह्मणवादी, धनलोलुप और बाजारवादी शब्दावलियों, प्रतीकों, मिथकों और व्यक्तिगत महिमामंडन से असहमत हो।
13. जो सहअस्तित्व, समता, सामूहिकता, सहजीविता, सहभागिता और सामंजस्य को अपना दार्शनिक आधार मानते हुए रचावबचाव में यकीन करता हो।
14. सहानुभूति, स्वानुभूति की बजाय सामूहिक अनुभूति जिसका प्रबल स्वर-संगीत हो।
15. मूल आदिवासी भाषाओं में अपने विश्वदृष्टिकोण के साथ जो प्रमुखतः अभिव्यक्त हुआ हो। "

हिंदी आदिवासी कविताएं -

आदिवासी विमर्श संबंधी साहित्य में कविता, कहानी, उपन्यास आदि प्रमुख विधाओं में रचनाएं हुई हैं। इनमें कविता सर्वाधिक महत्वपूर्ण विधा है। प्रमुख आदिवासी कविता संग्रहों में झारखण्ड की संथाली कवयित्री निर्मला पुतुल की 'नगाड़े की तरह बजते शब्द'; रामदयाल मुंडा का 'नदी और उसके संबंधी तथा अन्य नगीत' और 'वापसी, पुनर्मिलन और अन्य नगीत' आदि हैं। इसी तरह कुजूर, मोतीलाल और महादेव टोप्पो की कविताएं भी अपने प्रतीक चरित्रों और घटनाओं की कथात्मक संशलिष्टता के कारण विशिष्ट पहचान बनाने में सफल रही हैं। मुक्त बाजार आधारित अर्थव्यवस्था के दौर में आदिवासी कभी पैसे और कभी सरकारी नियमों के बल पर अपनी जमीन से बेदखल होकर पलायन कर रहे हैं। इसके कारण आदिवासी भाषा एवं संस्कृति संकट में पड़ गई है। परंपरागत खेलों से लेकर आदिवासियों की लोक-कला तक विलुप्त होती जा रही है। यह संकट वामन शेलके के यहाँ इस रूप में है-

सच्चा आदिवासी
कटी पतंग की तरह भटक रहा है,
कहते हैं, हमारा देश
इक्कीसवीं सदी की ओर बढ़ रहा है।

मदन कश्यप की कविता "आदिवासी" बाजार के क्रूर चेहरे को सामने लाती है-

ठण्डे लोहे-सा अपना कन्धा ज़रा झुकाओ,
हमें उस पर पाँव रखकर लम्बी छलाँग लगानी है,
मुल्क को आगे ले जाना है।
बाज़ार चहक रहा है
और हमारी बेचैन आकांक्षाओं में साथ-साथ हमारा आयतन भी
बढ़ रहा है,
तुम तो कुछ हटो, रास्ते से हटो।

अनुज लुगुन विस्थापन के भय को स्वर देते हुए लिखते हैं -

बाज़ार भी बहुत बड़ा हो गया है,
मगर कोई अपना सगा दिखाई नहीं देता।
यहाँ से सबका रूख शहर की ओर कर दिया गया है:
कल एक पहाड़ को ट्रक पर जाते हुए देखा,
उससे पहले नदी गयी,
अब खबर फैल रही है कि
मेरा गाँव भी यहाँ से जाने वाला है।

हिंदी आदिवासी गद्य

आदिवासी गद्य साहित्य की शुरुआत बीसवीं सदी के आठवें दशक में हुई। वाल्टर भेंगरा ने झारखण्ड अंचल और वहाँ के जीवन को केंद्र में रखते हुए 'सुबह की शाम' उपन्यास लिखा। इसे हिंदी का पहला आदिवासी उपन्यास माना जाता है। पीटर पाल एक्का ने 'जंगल के गीत' लिखा। इस उपन्यास में उन्होंने तुंबा टोली गाँव के युवक करमा और उसकी प्रिया करमी के माध्यम से बिरसा मुण्डा के उलगुलान का संदेश पहुंचाया। आदिवासियों द्वारा लिखे गए उपन्यास समकालीन शिल्प और ढाँचों से दूर दिखाई पड़ते हैं। इस कमी की भरपायी गैर आदिवासियों द्वारा लिखे गए आदिवासी उपन्यासों से कुछ हद तक हो गई है। ऐसे उपन्यासों में रमणिका गुप्ता का 'सीता-मौसी', कैलाश चंद चौहान का 'भँवर', रणेंद्र का 'ग्लोबल गाँव का देवता' आदि महत्वपूर्ण हैं। आदिवासियों द्वारा लिखे गए हाल के उपन्यासों में हरिराम मीणा का 'धूणी तपे

तीर' सर्वाधिक उल्लेखनीय है। रणेंद्र का 'ग्लोबल गाँव के देवता' सिर्फ आग और धातु की खोज करनेवाली और धातु पिघलाकर उसे आकार देनेवाली कारीगर असुर जाति के "जीवन का संतप्त सारांश" है। उपन्यास की शुरुआत इस पीड़ा से होती है- "छाती ठोंक ठोंककर अपने को अत्यन्त सहिष्णु और उदार करनेवाली हिन्दुस्तानी संस्कृति ने असुरों के लिए इतनी जगह भी नहीं छोड़ी थी। वे उनके लिए बस मिथकों में शेष थे। कोई साहित्य नहीं, कोई इतिहास नहीं, कोई अजायबघर नहीं। विनाश की कहानियों के कहीं कोई संकेत्र मात्र भी नहीं' उपन्यास के अंत तक असुर जनजाति की त्रासदी 'व्यापक समाज की त्रासदी का प्रारूप बन जाती है।

शोध-सार

शांत और एकांत प्रिय रहने वाले आदिवासियों के जीवन में औद्योगीकरण के बढ़ते प्रभाव ने उथल-पुथल मचा दी। कल तक जो इस जल, जंगल और जमीन का मालिक था, आज वह उसी से वंचित है। विकास के नाम पर आदिवासियों के साथ छल किया गया, उन्हें अपनी जमीनों से बेदखल कर पलायन को मजबूर कर दिया गया। आज आदिवासियों में विस्थापन की मुख्य समस्या हैं, वे रोजगार की तलाश में दर-दर की ठोकरे खा रहा हैं। तथाकथित सभ्य समाज आदिवासी समाज को अपनी बराबरी का दर्जा नहीं देना चाहता है। वैश्वीकरण के कारण आदिवासी संस्कृति दुषित हो रही है। प्रकृति को आलिंगन करने वाले और सामूहिकता, सहजीविता व सहअस्तित्व में विश्वास करने वाले आदिवासियों को सभ्य समाज द्वारा हेय दृष्टि से देखा जाता है। वैश्वीकरण के इस दौर में आदिवासी समाज की अस्मिता व अस्तित्व संकट में है। आदिवासी समाज में विस्थापन, पलायन, रोजगार भूखमरी, अशिक्षा और स्त्री अस्मिता मुख्य समस्याएँ है।

निष्कर्ष:

स्पष्ट है कि आदिवासी समाज सदियों से जातिगत भेदों,वर्ण व्यवस्था, विदेशी आक्रमणों, अंग्रजों और वर्तमान में सभ्य कहे जाने वाले समाज (तथाकथित मुख्यधारा के लोग) द्वारा दूर-दराज जंगलों और पहाड़ों में खदेड़ा गया है। अज्ञानता और पिछड़ेपन के कारण उन्हें सताया गया है। अक्षरज्ञान न होने के कारण यह समाज सदियों से मुख्यधारा से कटा रहा, दूरी बनाता रहा। उनकी लोककला और उनका साहित्य सदियों से मौखिक रूप में रहा हैं और इसका कारण रहा उनकी भाषा के अनुरूप लिपि का विकसित न हो पाना। यही कारण साहित्य जगत में आदिवासी रचनाकार और उनका साहित्य गैर-आदिवासी साहित्य की तुलना में कम मिलता है।

संदर्भ सूची:-

1. सं. रमणिका गुप्ता, आदिवासी साहित्य यात्रा, संस्करण 2016, पृ.सं. 24
2. सं. डॉ. उषाकीर्ति, डॉ. सतीश पाण्डेय, डॉ. शीतलाप्रसाद दुबे,आदिवासी केन्द्रित हिंदी साहित्य, प्रथम संस्करण 2012, पृ.सं. 30
3. सं. वंदना टेटे, आदिवासी दर्शन और साहित्य, संस्करण 2016, पृ.सं. 24
4. सं. खन्नाप्रसाद अमीन, आदिवासी साहित्य, पृ.सं. 24
5. आदिवासी साहित्य पर जे.एन.यू. में आयोजित राष्ट्रीय संगोष्ठी में दिये गये व्याख्यान से
6. आदिवासी साहित्य विकीपीडिया पेज से
7. सं. वंदना टेटे, आदिवासी दर्शन और साहित्य, संस्करण 2016, पृ.सं. 34
8. वही., पृ.सं. 49
9. सं. वंदना टेटे, एलिस एक्का की कहानियाँ, राधाकृष्ण प्रकाशन, प्र.सं. 2015, पृ.सं. 22
10. वंदना टेटे, आदिवासी साहित्य: परम्परा और प्रयोजन, प्रथम संस्करण 2013, पृ.सं. 87
11. सं. रमणिका गुप्ता, आदिवासी साहित्य यात्रा, संस्करण 2016, पृ.सं. 29
12. सं. रमणिका गुप्ता, हरिराम मीणा जी का साक्षात्कार, युद्धरत आम आदमी, अंक 13, नव. 2014, पृ.सं. 64
13. सं. खन्नाप्रसाद अमीन, आदिवासी साहित्य, पृ.सं. 93
14 -टेटे, वंदना (सं.), आदिवासी दर्शन और साहित्य, पृष्ठ सं. 49-50
15. मीणा, श्रवण कुमार (सं.), समकालीन विमर्श : बदलते परिदृश्य, पृष्ठ सं. 55

भारतीय समाज के विविध आयाम

डॉ नम्रता जैन हिन्दी-समीक्षक, समालोचना एवं संपादन कला में दक्ष डा. नम्रता जैन तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय से संबंद्ध तीर्थंकर आदिनाथ कॉलेज ऑफ एजूकेशन में सहायक प्राध्यापिका के पद पर कार्यरत है आपकी शिक्षा एम.ए.(हिंदी, संस्कृत, योगा) यू.जी.सी. नेट . (हिंदी एवं शिक्षा शास्त्र) एम.एड. पी.एच.डी. (हिंदी) है आपको शिक्षा के क्षेत्र में 16 वर्ष का अनुभव है। आपने अनेक अंतर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय कार्यशालाएं, सेमिनार, वेबीनार आयोजित किये है एवं प्रतिभाग भी किया है। लेखिका के रूप में आपकी 10 से भी अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। साथ ही हिंदी एवं संस्कृत विषय पर प्रतियोगी पुस्तके प्रकाशित हो चुकी है। संपादिका के रूप में आपकी 12 से अधिक पुस्तके संपादित हो चुकी हैं। विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में आपके लेख एवं शोध पत्र प्रकाशित हो चुके है। आप Universe Journal of Education & Humanities में एडिटोरियल बोर्ड मेम्बर भी है। विश्वविद्यालयी स्तर पर भी आप अकादिमक कार्य हेतु अनेक उत्तरदायित्वों का निर्वाहन भी करती है।

डॉ कल्पना जैन तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय से संबंद्ध तीर्थंकर महावीर इंस्टिट्यूट ऑफ मेनेजमेन्ट एंड टेक्नालॉजी (डी.एल.एड.) में प्राचार्या के पद पर कार्यरत हैं। आपकी शिक्षा एम.ए. (हिन्दी एवं राजनीति शास्त्र) एम.एड. एवं दो विषयों पर पी.एच. डी. (शिक्षाशास्त्र एवं दर्शनशास्त्र) है। आपको शिक्षा के क्षेत्र में 30 वर्ष का अनुभव है। लेखिका के रूप में आपकी 3 से भी अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। साथ ही हिंदी एवं संस्कृत विषय पर प्रतियोगी पुस्तके प्रकाशित हो चुकी है। संपादिका के रूप में आपकी 12 से अधिक पुस्तके संपादित हो चुकी हैं। विभिन्न पत्र पत्रिकाओं में आपके लेख एवं शोध पत्र प्रकाशित हो चुके है । आप Universe Journal of Education & Humanities में एडिटोरियल बोर्ड मेम्बर भी है। विश्वविद्यालयी स्तर पर भी आप अकादिमक कार्य हेतु अनेक उत्तरदायित्वों का निर्वाहन भी करती है। आपने अनेक अंतर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय कार्यशालाएं , सेमिनार, वेबीनार आयोजित किये है एवं प्रतिभाग भी किया है।

डॉ. रत्नेश कुमार जैन तीर्थंकर महावीर विश्वविद्यालय से संबंद्ध तीर्थंकर आदिनाथ कॉलेज ऑफ एजूकेशन में प्राचार्य के पद पर कार्यरत हैं। आपकी शिक्षा एम.एस.सी. (वनस्पति शास्त्र, आई.टी.) एम.ए.(अंग्रेजी, योगा) यू.जी.सी. नेट पी.जी.डी.सी.ए. ,एम. एड. ,पी.एच.डी. है। आपको शिक्षा के क्षेत्र में 17 वर्ष का अनुभव है। विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में आपके लेख एवं शोधपत्र प्रकाशित हो चुके हैं। आपने अनेक अंर्तराष्ट्रीय एव राष्ट्रीय कार्यशालाये, सेमीनार, बेबीनार आयोजित किये हैं एवं प्रतिभाग भी किया है। सम्पादक के रूप में आपकी 10 से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। आप **Universe Journal of Education & Humanities** में एडिटोरियल बोर्ड मेम्बर भी है। विश्वविद्यालयी स्तर पर भी आप अकादिमक कार्य हेतु अनेक उत्तरदायित्वों का निर्वाहन भी करती है। लेखक के रूप में आपकी 6 से भी अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी है

मूल्य 995.00 रुपये

जे.टी.एस. पब्लिकेशन्स

वी -508 गली नं. 17,विजय पार्क,दिल्ली -110053

मो.08527460252,9990236819

ई मेल : jtspublications@gmail.com

ब्रांच ऑफिस: ए-9, नवीन इनक्लेव गाज़ियाबाद, उत्तर प्रदेश, पिन-201102

ISBN 978-93-92611-58-2

9 789392 611582